Anusanadhan: A Multidisciplinary International Journal (In Hindi)
Volume 9, Issue 3&4 - 2024, Pg. No. 28-33
Peer Reviewed Journal

Research Article

प्राचीन भारत में रसायन

Rameshwar Pandey

Assistant Professor, Department of Ancient History, National PG College Barhalganj, Gorakhpur, Uttar Pradesh India.

DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407

I N F O

E-mail Id:
rameshwarnpg@gmail.com
Orcid Id:
https://orcid.org/0009-0001-2969-6174

Date of Submission: 2024-11-11
Date of Acceptance: 2024-12-15

सारांश

इस शोध पत्र में लेखक ने प्राचीन भारत में रसायन विषय को प्रस्तुत किया है। इस शोध पत्र में लेखक ने चरक, कौटिल्य एवं नागार्जुन के रासायनिक कार्यों पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए उनके महत्व एवं उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। लेखक ने प्रभावी ढंग से दर्शाया है कि कैसे इन प्राचीन भारतीय विद्वानों ने रसायन विज्ञान के क्षेत्र में अग्रणी योगदान दिया। यह शोध पत्र यह बताता है कि कैसे इन प्राचीन भारतीय विद्वानों ने रासायनिक अनुसंधान और प्रयोग की नींव रखी, जिससे भविष्य के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ।

मुख्य बिंदु: खनिज, चरक संहिता, अथर्ववेद, अर्थशास्त्र, रस रत्नाकर, गन्धक, स्वर्ण, पारद ।

धातु, विष, समुद्रज द्रव्य, खनिज द्रव्य इत्यादि से सम्बन्धित विज्ञान को रसायन विज्ञान कहा गया है। चरक संहिता[1] में रसायन की परिभाषा दी गयी है "उत्तम रस आदि धातुओं को प्राप्त करने का जो उपाय है उसे रसायन कहते हैं"। अतः शरीर में रस आदि धातुएँ अच्छी रूप में बनी रहें जिससे शरीर स्वस्थ रहे। इस प्रकार उत्तम गुणों से युक्त रस आदि धातुओं की प्राप्ति जिन उपायों द्वारा होती है, उन उपायों को ही रसायन कहा जाता है। इसको रसशास्त्र भी कहा गया है। उत्तरवर्ती काल में रसशास्त्र चिकित्सा विज्ञान का महत्वपूर्ण अंग बन गया था। संस्कृत में रस शब्द का प्रयोग पारद के लिये होता था। अथर्ववेद में रस को शारीरिक बल का साधन बताया गया है।[2] इसी प्रकार अर्थववेद के एक श्लोक में वर्षा के जल का महत्व बताया गया है कि इस जल को इकट्ठा करके इसमें रस (रसायन या सोम रस) मिलाकर पीने से दीर्घायु और तेजस्विता प्राप्त होती है।[3] शार्गधर भी जरावस्था (वृद्धावस्था) एवं व्याधि को नष्ट करने में समर्थ औषधि को रसायन कहते हैं। शरीर में प्रशस्त रक्त आदि धातुओं का निर्माण, धातुओं का जीर्णोधार, धातुओं की शिथिलता को नष्ट करने वाला, नये धातुओं का निर्माण, धातुओं का पोषण तथा धातु शैथिल्य जनित रोगों को नष्ट करने में जो औषधि समर्थ हो उसे रसायन कहते हैं। इससे शरीर में ओज, तेज, कान्ति, वर्ण, उत्तम स्वर, नव यौवन आदि प्राप्त होता है। शरीर में इस प्रकार के गुण को उत्पन्न करने वाला रसायन कहलाता है।

रस को हम द्रव्य रूप कह सकते हैं तथा रसायन उसका गुण है। रस द्रव्यों से निर्मित समस्त कल्पों में रसायन गुण निहित होता है। रस द्रव्य संस्कारित (शोधित, मारित आदि) होने पर रसायन गुणों को प्रदान करने वाला हो जाता है।

चरक के युग में रसायन की परम्परा :

'चरक संहिता' के रचनाकार चरक जिनके नाम से यह ग्रन्थ विख्यात है, उनके जीवन और काल के विषय मे बहुत मतभेद है। कृष्ण यजुर्वेद की शाखा चरक नाम से प्रसिद्ध है। इसके अध्ययनकर्ता चारक कहे जाते थे। विद्वानों की यह मान्यता है कि शायद कोई व्यक्ति इस शाखा से सम्बन्धित रहा हो और आयुर्वेद के क्षेत्र मे प्रसिद्ध हुआ हो। शतपथ ब्राह्मण और उपनिषदों में वैशम्पायन के शिष्यों को चरक कहा गया। संभवतः वही 'चरक संहिता' का संस्कारकर्ता हो। बौद्ध ग्रन्थों में भ्रमणशील सन्यासियों को चरक संज्ञा से सम्बोधित किया गया है। इसके अतिरिक्त भी चरक नाम से सम्बन्धित तथ्य है लेकिन किसी की साम्यता चरक से स्थापित नहीं की जा सकी है। सिल्वा लेवी महोदय चरक को कुषाण सम्राट का समकालीन मानते हुए प्रथम शती ई० में इनका कार्यकाल रखा है।

आयुर्वेदीय चिकित्सा की आर्ष परम्परा के आरम्भ में मुख्य रूप से वानस्पतिक द्रव्यों का उपयोग होता था। खनिज द्रव्यों का उपयोग भी संहिता काल में प्रारम्भ हो चुका था किन्तु इसके प्रयोग का क्षेत्र सीमित था। इसका मुख्य कारण खनिज द्रव्यों का स्वभाव से विषैला

Copyright (c) 2024: Author(s). Published by Advanced Research Publications

होना था। शोधन एवं मारण जैसी विधियाँ मध्य काल में विकसित हुयी जिनसे उपचारित होकर खनिज द्रव्य दोष मुक्त और औषध गुण सम्पन्न हो जाते थे। कुछ विद्वान रस शास्त्र को इसी रसायन चिकित्सा का विकसित रूप मानते हैं।

चरक संहिता में रसायन सम्बन्धी तथ्य अनेक स्थानों पर मिलते हैं। इसमें उल्लिखित है कि उत्तम रस आदि धातुओं को प्राप्त करने का जो उपाय है, उसे रसायन कहते हैं। चरक संहिता में रसायन के महत्व को समझाया गया है। जिस प्रकार देवताओं के लिये अमृत और नागों के लिये देखना है उसी प्रकार प्राचीन काल में गहर्षियों के लिये रसायन विधि का सेवन था। प्राचीन काल में रसायन विधि के सेवन में तत्पर ऋषिगण न वृद्धावस्या, न दुर्बल, न रोगावस्था और न मृत्यु को प्राप्त होते थे। इसलिए वे हजारों वर्ष की आयु का भोग करते थे।[4]

चरक के रसायन का प्रयोग क्षेत्र :

रसायन आयु के लिये हितकर है और आरोग्य देने वाला है तथा अवस्था का स्थापक है। यह निद्रा, तन्द्रा, श्रम, आलस्य और दुर्बलता को दूर करने वाला है। वात, कफ, पित्त को सम करने वाला है। शरीर में स्थिरता उत्पन्न करता है। शिथिल मांस पेशियों को सुसंगठित करता है। जठराग्नि को दीप्त करता है। प्रभा, वर्ण और स्वर को उत्तम बनाता है। इस रसायन विधान के प्रयोग से च्यवन आदि ऋषि पुनः युवा हो गये तथा स्त्रियों के लिये प्रिय हो गये।[5]

चरक ने अपनी संहिता में मुख्यतः जिन रसायनों का उल्लेख किया है उनका प्रयोग आयुर्वेदिक औषधियों के रूप में होता था। चरक संहिता में कुछ औषधि रसायन का उल्लेख मिलता है, जो निम्न है :–

ब्राहम रसायन, नागबला रसायन, उन्नीस बलादि रसायन, केवलामलक रसायन, लौहादि रसायन, ऐन्द्र रसायन, मेध्य रसायन, पिप्पली रसायन, पिप्पली वर्धमान रसायन, त्रिफला रसायन, इन्द्रोक्त रसायन, द्रोणी प्रावेशिक रसायन आदि।

कुछ औषधि रसायन निम्न विधियों से प्राप्त होते थे और जिनके चिकित्सकीय क्षेत्र में अनके लाभ हैं।

लौहादि रसायन :

उत्तम फौलाद लौह के, तिल के समान मोटे चार अंगुल लम्बे पत्रों को आग में गर्म करें जब वह अत्यन्त लाल हो जाये तो त्रिफला के क्वाथ (काढा) में, गौ के मुत्र में मालकांगनी के क्षार जल में, इंगुदी के क्षार जल में तथा पलाश –क्षारोदक में क्रम से बुझावें, जब वह बुझाते बुझाते अंजन के समान काला हो जाये तो उसका महीन चूर्ण बनाकर उस चूर्ण को मधु और आंवले के रस में मिश्रित करके घृतभावित दृढ़ मिट्टी के घड़े में इस लेह को रखकर मुख बन्द कर एक वर्ष तक जौ की राशि में गाड़ दे, पर बीच–बीच में एक–एक मास पर घड़े को हिलाकर लौह, मधु और आंवले के रसों से उसे आलोडित (मन्थन) करना चाहिये। इस प्रकार एक वर्ष पूरा हो जाने पर इस रसायन का प्रयोग प्रातः मधु और घृत से करना चाहिये। इस रयायन के सेवन से चोट आदि लगने से त्वचा आदि में विकृति नहीं होती। इसके प्रयोग से शरीर में रोग होने का तथा असमय वृद्धावस्या आ जाने का भय नही रहता है। वह हाथी के समान बलवान होता है।

पिप्पली रसायन :

रसायन गुण की इच्छा रखने वाले पुरुष के लिये यह उचित है कि पलास के क्षार जल में पिप्पली को भावित कर गो घृत में भुनने के पश्चात् उसके चूर्ण को मघु एवं घृत के साथ प्रातः काल भोजन के पूर्व एवं पश्चात् लेना चाहिये। यह रसायन उन्हीं व्यक्तियों के लिये लाभाकारी है जो व्यक्ति श्वास, कास आदि आदि रोगों से पीड़ित हैं।

त्रिफला रसायन :

भोजन के पच जाने पर एक हड़र का चूर्ण भोजन के पहले दो बहेरे का चूर्ण और भोजन करने के बाद चार आवंले का चूर्ण मधु एवं घी के साथ प्रयोग करना चाहिये। इस त्रिफला रसायन के सेवन से मनुष्य रोग तथा वृद्धावस्था से रहित होकर सौ वर्ष तक जीवित रहता है।। त्रिफला रसायन का प्रयोग अन्य प्रकार से किया जाता है।

पुंसवन संस्कार के लिये चरक संहिता में सुवर्ण एवं रजत की पुरुष आकृति का निर्माण कर उसे अग्नि में प्रतप्त कर गोदुग्ध में सेचन कर पान कराने का विधान है।[6] इसी प्रकार पाण्डु रोग की चिकित्सा में अनेक प्रकार के लोहों तथा अन्य खनिजों का भी प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता था। मण्डलकुष्ठ की चिकित्सा के लिये त्रपु (टिन), शीश (शीशा) और लौह चूर्ण का आभ्यन्तर प्रयोग बतलाया गया है।[7]

चरक संहिता में तीन प्रकार के द्रव्य बताते हुए खनिज धातुओं का उल्लेख किया गया है। यहाँ पर छः धातुएँ बतलायी गयी हैं– सुवर्ण, ताम्र, रजत, त्रपु, शीशक, लौह। शिलाजतु, रेत, सुधा (चूना), मनः शिला, हरताल, मँडिया, लवण, गैरिक, अंजन आदि भी इसी वर्ग में आते हैं। चरक संहिता में धातुओं का प्रयोग बहुत सीमित रूप में था।

त्रिफला रसायन के अन्य योग में त्रपु, शीश, ताम्र, रूप, कृष्ण लोह और सुवर्ण के भस्म, मीठा वच के चूर्ण, मधु, घृत, वायविडंग, पिप्पली और सेंधा नमक के साथ एक वर्ष तक रसायन फल के लिये प्रयोग करना बताया है। इसमें भी इनका सूक्ष्म चूर्ण करने का प्रयोग विधेय है।[8]

चरक संहिता में धातुओं के बारीक चूर्णों के लिये रजस् शब्द का प्रयोग आता है। भस्म नही। ताम्र एवं स्वर्ण को भी सूक्ष्म चूर्ण बतलाया गया है।

धातुओं के साथ स्वर्णमाक्षिक, रजतमाक्षिक तथा प्रवालचूर्ण का भी उपयोग है। चरक संहिता में मुक्ताद्यचूर्ण नाम से एक योग है– मुक्ता, प्रवाल, वैडूर्य, शंख, स्फटिक, अंजन, ससार (स्फटिक भेद) गन्धक, काच, अर्क, सूक्ष्मैला, सैन्धव और सौवर्चल नमक, ताम्र, रजत और लोहे का चूर्ण, सौगन्ध्य (माणिक्य भेद चक्रपाणि) शीशक, जातिफल, सन के बीज, अपामार्ग तण्डुल इन सबका चूर्ण एक कर्ष मात्रा में मधु और घी के साथ खाने से हिक्का, श्वास और कास नष्ट होते हैं। इस योग में धातुओं तथा दूसरे खनिज द्रवों का प्रयोग चूर्ण रूप में ही हुआ है। यह चूर्ण अंजन–सुरमें के समान होना चाहिये, तभी शरीर में इसकी क्रिया सम्भव है।

ISSN: 2456-0510
DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407

सामान्य रूप से शारीरिक व मानसिक दोषों को दूर न कर रसायन का सेवन जो व्यक्ति करता है वह व्यक्ति रसायन के सभी गुणों से कभी भी युक्त नहीं होता। जिन व्यक्तियों की आत्मा अपने वश में है, ऐसे व्यक्ति के लिये और जिनका मन व शरीर शुद्ध है, वे यदि आयु को बढ़ाने वाले रसायन का सेवन करते है, या वृद्धावस्था या रोग को दूर करने वाले केवल रसायन का सेवन करते हैं तो उनकी मनोरथ की सिद्धि होती है, अर्थात् रसायन के सभी गुण उसे प्राप्त होते हैं। अतः उपर्युक्त बताये हुए रसायन द्रव्यों को जिन व्यक्तियों की आत्मा गिर चुकी है और जो पाप और वासना में लिप्त हैं उन्हें इनका उपदेश कदापि नही करना चाहिये।

कौटिल्य एवं रसायन :

कौटिल्य अर्थशास्त्र के प्रणेता हैं। अभिधान चिन्तामणि में इनके अन्य नाम विष्णु गुप्त, मल्लनाग, कौटिल्य, द्रामिल, पक्षिल स्वामी, वात्स्यायन और अंगल हैं।[9] इन्हें चणक का पुत्र होने से चाणक्य और कुटिल गोत्र होने से कौटिल्य कहा जाता है। कौटिल्य का सम्पूर्ण अर्थशास्त्र १५ अधिकरण एवं १८० प्रकरणों में विभक्त है। अर्थशास्त्र के अन्त की पुष्पिका में कौटिल्य ने स्वयं कहा है– जिसने शास्त्र, शस्त्र और नन्दराजा के अधीन हुई भूमि को क्रोध के कारण बहुत जल्दी उद्धार कर दिया, उसी विष्णु गुप्त कौटिल्य ने इस शास्त्र को बनाया है। इसमें राज्य या राजा की उत्पत्ति, राज्य के तत्व, राजा की स्थिति, उसके अधिकार एवं कर्तव्य, सैन्य व्यवस्था, गुप्तचर इत्यादि विषयो पर विचार किया गया है।

कौटिल्य ने अपने रसायन का प्रयोग शत्रुओं से अपने राष्ट्र की रक्षा के लिये किया था। कौटिल्य के रसायन का उल्लेख अर्थशास्त्र के १२वें, १३वें और १४वें अधिकरण मे दिया है।[10] १४वें अधिकरण में शत्रु के प्रति मारक मंत्र, रसायन आदि के विषय में कहा गया है, लेकिन साथ ही यह भी लिखा कि चारो वर्ण में जो अधार्मिक व्यक्ति हो उन्ही पर इसका प्रयोग करें। शत्रुओं के लिये उपभोग्य वस्त्र एवं भोजन आदि पर श्रद्धेय देश, वेश, शिल्प और पात्रता का ढोंग रचने वाले पाखण्डी, कुबड़े, बौने, ठिगने, गूँगे, बहरे, जड़अंध आदि के छदम वेश में घूमने वाले अपने अनुचर म्लेच्छ आदि स्त्री–पुरुषों के द्वारा कालकूट आदि विष का प्रयोग करावें। वे गूढ़ पुरुष शत्रु की क्रीड़ा सामग्री (खेल सामग्री) आभूषण, भाण्ड एवं अन्यान्य उपभोग्य वस्तु रखने के स्थानों पर शस्त्र छिपाकर रखते हुए अवसर देख कर प्रहार कर देना चाहिये। कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ में रसायन का प्रयोग निम्नवत् किया है :

चितकबरा मेढक, कौण्डिन्यक (जिसका पेशाब तथा पाखाना विषयुक्त होता है), कृककण, कूट का पंचाग, शतपदी, (कनखजूरा) इनका चूर्ण, उच्चिटिंग (बर्र), कम्बली (एक कीड़ा), शतावर, जमीकन्द, ढाक की लकड़ी, गिरगिट का चूर्ण, छिपकली, दुमुहीं सर्प, कृककण (जंगली तीतर), पूति नामक क्रीड़ा और गोमारिका बूटी के चूर्ण को मिलाकर बकुची (बल्गुक) के रस में खल करके बनाया हुआ नुस्खा प्राणघातक होता है। इन चूर्णों का धुंवा भी बहुत प्राण घातक होता है।

यदि चिड़चिड़ा और यातुधान नाम की बूटी की जड़ कूट का भल्लातक चूर्ण के साथ खिलाने पर शत्रु का पन्द्रह दिन में प्राण नाश हो जाता है। अमलताश की जड़ के चूर्ण को भल्लातक पुष्प और उक्त कीड़े में से किसी एक के चूर्ण में मिलाकर खिला देने से शत्रु की एक माह में मृत्यु हो जाती है। इस कीट योग की एक कला (भार) मनुष्य को, दो कला (भार) मात्रा का प्रयोग गधा एवं अश्व पर, चार कला हाथी, ऊँट पर प्रयोग करने से वे मर जाते हैं।

शतावर, कर्दम (अगर, तगर, केसर, कुंकुम और कपूर का पीसा हुआ लेप), बर्र, कनेर, कड़वी तुम्बी और मछली को धतूरे एवं कोदो के पुआल, हस्तिकर्ण तथा ढाकपत्र मिलाकर आग पर सुलगावें तो इसका धुँवा जिधर जायेगा, वहाँ तक शत्रुओं का संहार हो जायेगा।

पूतिकीट (पात बिच्छी), मछली, कड़वी तुम्बी, शतावरी, कर्दम, इन्द्रगोप (बीर बहुटी) का मिश्रित चूर्ण अथवा पूतिकीट, क्षुद्रा (कटहरी), राल, धतूरा और विदारी कन्द का चूर्ण बकरे के सींग और खुर के चूर्ण के साथ आग पर डालने से जिसे इसका धुंवा लगेगा वह अपना नेत्र खो बैठेगा। इसी प्रकार से सर्प के केचुल, गौ का गोबर, अश्व की विष्ठा और दुमुंहे सर्प के मस्तक भी शत्रुओं को अन्धा बना सकता है। मैना, कपोत, वकुल–वकुली इन सबकी विष्ठा को आक, सहँजना, पीलू और सेंहुड़ के दूध में डालकर बना हुआ अंजन आंखों को नष्ट करने वाला तथा जल को दूषित करने वाला होता है।

इसी प्रकार अर्थशास्त्र में रसायनों के प्रयोग से शत्रुओं को पागल या उन्मादक बनाने का भी उल्लेख हैं, जैसे जौ एवं धान की जड़ (शालि), धतुरे का फल, जूही पत्र और मानवमूत्र को एकत्र करके पीपल और विदारीकन्द मूल में मिलाकर मूक नामक मछली, गूलर, मैनफल (धतूरा) और कोदों के क्वाथ (काढा) में डाल दे या हस्तिकर्ण एवं पलास के क्वाथ में मिलाने से तैयार हुआ यह मदन योग शत्रुओं के चित्त को भ्रांत कर देता है या पागल बना देता है।

कृकलास (गिरगिट), गुहगोधिका (छिपकली) और दुमुंहे सर्प की आतों को जलाने से जो धुंवा निकलता है वह शत्रुओं को अन्धा एवं उन्मत्त बना देता है। केवल कृकलास और गुहगोधिका धूम्र से कुष्ठ और इसमें चितकबरे मेढ़क की अन्तड़ी मिलाने से शत्रुओं को प्रमेह रोग हो जाता है। इसी योग में यदि मानव रक्त मिला दिया जाय तो क्षय रोग हो जाता है।

इसी प्रकार कुछ आयुर्वेदिक वनस्पतियों से भी रसायन प्राप्त करने का उल्लेख अर्थशास्त्र में मिलता है। जैसे–सेमल, विदारीकन्द एवं धनियाँ में पिप्पली मूल, वत्सनाभ और छछूँदर का रक्त मिलाकर बाण पर लेप कर दें। यह बाण जिस मनुष्य को जा लगेगा वह आहत होकर दस मनुष्यों को दाँत से काट खायेगा तथा जो दस व्यक्ति दाँत से काटें जायेगें, वे भी दस–दस व्यक्तियों को काट खायेंगे। इस प्रकार यह विष सर्वत्र फैल जायेगा।

इस प्रकार से कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अन्य अनेक औपनिषदिक रसायनों के द्वारा शत्रुओं को नष्ट किये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है।

ISSN: 2456-0510
DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407

अर्थशास्त्र में शत्रुओं को धोखा देने के लिये विभिन्न रसायनों का उल्लेख मिलता है। यहाँ मायावी प्रयोगों द्वारा भी शत्रु का नाश करना अनुचित नहीं माना गया है। विजयाभिलाषी राजा इन प्रयोगों से अपनी सेना के लोगों की आकृति बदल दे तथा शत्रु सेना को धोखा देकर पराजित कर दे। इन मायावी प्रयोगों से राजा शत्रु की सेना का क्षय करता था तथा अपनी शक्ति में वृद्धि करता था। यथा सिरस (शिरीष), गूलर, और शमी की छाल का चूर्ण खा लेने पर एक पखवारे तक भूख नहीं लगती। इसी प्रकार कसेरू, कमल की जड़, ईख की जड़, कमल पुष्प का डंठल, दूब, धृत, दूध और मांड के मिश्रित योग का सेवन करने से एक महीने तक भूख नहीं लगती। इसी प्रकार से उड़द, जौ, कुलथी और कुश की जड़ का चूर्ण दूध और धृत में मिलाकर खाने से एक महीने तक भूख नहीं लगती ।

श्वेत बकरे के मूत्र में श्वेत सरसों को सात रात्रि तक भिगोने के पश्चात् तेल निकलवा लें और फिर उस तेल को कटुतुम्बी में एक मास तक रखें। इसके बाद इस तेल को जिस मनुष्य या पशु पर लगा दे तो उसकी आकृति में परिवर्तन हो जाता है।

श्वेत बकरा या श्वेत गधे में से किसी एक के मलमूत्र के रस में सरसों का तेल, आक, पलास, पीपल और धान का चूर्ण मिलाकर लगाने से मनुष्य का वर्ण श्वेत हो जाता है। इसी प्रकार आक की रूई, पारस, पीपल, अर्जुन वृक्ष का कीड़ा और श्वेत गृहगोधिका (छिपकली) को एकत्र पीस कर बालों पर लगाया जाय तो बाल शंख के समान सफेद हो जायेंगे।

इसी प्रकार से तोते के अण्डे के रस में तोते का पित्ता मिलाकर शरीर पर मालिश करने से कुष्ठ रोग हो जाता है, किन्तु चिरोंजी वृक्ष के कल्क का काढ़ा पिलाने से कुष्ठ रोग ठीक हो जाता है। खद्योत (जुगुनू), और केचुंए का चूर्ण तथा समुद्र के छोटे–छोटे जन्तुओं तथा भृंगपक्षी के मस्तक का चूर्ण, खैर और कनेर के फूलों का चूर्ण, गिद्ध और कांगनी के तेल में डाला हुआ बांस का चूर्ण, मेढक की चर्बी और नीम की छाल से निर्मित स्याही – इन सबके मिश्रण से बने योग के मालिस से शरीर में अग्नि के समान चमक आ जाती है।

पोदिना, खिरेटी, बेंत और नीम की जड़ के कल्क में मेढक की चर्बी मिलाकर तेल बनाकर मैल रहित पाँवों में लगाने से मनुष्य धधकते हुए अंगारों पर वैसे ही चल सकता है जैसे कि फूलों पर चल रहा हो।

तेल में भिगोये हुए समुद्र फेन को जला कर जल में छोड़ दे तो वह जलते हुए तैरता रहेगा। छछूँदर, खंजन पक्षी और उसर भूमि में उत्पन्न हुआ कीड़ा (खारकीट) को पीस कर अश्व के मूत्र में मिलाकर उपयोग करने वाला मनुष्य लोहे की सांकलों को भी तोड़ने में समर्थ होता है।

बाज, कंक (सफेद चील), काक (कौआ), गिद्ध, कौंच और बीचिरल्ल, इन सब पक्षियों की चर्बी अथवा वीर्य को पाँव और जूते में लगा कर सौ योजन तक बिना थके चला जा सकता है। इसी प्रकार से बिना थके चलने के अन्य उपाय भी दिये गये हैं।

इस प्रकार के अनिष्ट करने वाले अद्भुत उपायों के द्वारा शत्रु को व्यथित किया जाता था। इन कार्यों के द्वारा शत्रु के राज्यों में अराजकता उत्पन्न किया जाता था।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र से ज्ञात होता है कि सुवर्ण निष्कर्षण के बाद यदि उसमें कोई अशुद्धियाँ रह जाय तो उसे पुनः शीशा देकर शुद्ध किया जाता था। कौटिल्य ने स्वर्ण को विकृत (खराब) करने के लिये हिंगुल (cinnabar) रगड़ने का विधान बताया है।

इसके अतिरिक्त अर्थशास्त्र में अन्य रसायनों का प्रयोग शत्रु नाश के लिये किया गया है। इन तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि हमारे प्राचीन मनीषी अनेक रसायनों का प्रयोग करना जानते थे एवं उन रसायनों के दुष्परिणामों से बचने का भी उपाय भी जानते थे। इसके साथ ही उनका अपने राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना भी दिखाई देती है। राष्ट्र की रक्षा के लिये वे अनेक विधियों को अपनाते थे।

नागार्जुन का आविर्भाव एवं रसायन :

नागार्जुन रसायन शास्त्र के प्रमुख आचार्य थे। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है। भारतीय ग्रन्थों में अनेक नागार्जुन का उल्लेख मिलता है। ई० सन् १०० वर्ष पूर्व से लेकर आठवीं शताब्दी तक कई नागार्जुन हुए। प्रबन्ध चिन्तामणि के अनुसार नागार्जुन 'पदलिप्त सूरि' के शिष्य थे और वे उनसे ही आकाश गमन की विद्या को सीखे थे। प्राचीन काल में पार्श्वनाथ की रत्नमूर्ति द्वारका के पास समुद्र में डूब गयी थी, जिसका उद्धार किसी सौदागर ने किया था। गुरु से यह जानकर कि पार्श्वनाथ के पादमूल में बैठकर यदि कोई सर्वलक्षण समन्विता स्त्री पारा घोंटे तो कोटिवेधी रस तैयार होगा। नागार्जुन ने अपने शिष्य राजा सातवाहन की रानी चन्द्रलेखा से पार्श्वनाथ की रत्नमूर्ति के समक्ष पारद (पारा) मर्दन करवाया था। ऐसा भी कहा जाता है कि रानी के पुत्रों ने रस के लोभ में नागार्जुन को मार डाला लेकिन इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि नागार्जुन रसायन के ज्ञाता थे।[11]

इसी प्रकार वाण के हर्षचरित में सातवाहन राजा के साथ मैत्री का उल्लेख किया गया है। वह दार्शनकि नागार्जुन के नाम से विख्यात था साथ ही वह रस या रसायन विद्या का भी विशेष ज्ञाता था। इसी प्रकार नागार्जुन के सम्बन्ध में आर्यमंजुश्रीमूलकल्प नामक ग्रन्थ में 'श्री मंजुमुनि' जो दूसरी शताब्दी में थे, उन्होंने कहा है कि भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के ४०० वर्ष बाद दार्शनिक नागार्जुन हुआ था और बौद्ध धर्म में दीक्षित होकर अनेक शास्त्रों, मायूरी विद्या एवं तंत्र मंत्रों की सिद्धि प्राप्त की थी। वह महात्मा १०६ वर्षों तक जीवित रहा। वे शून्यवाद के परम पण्डित थे। उन्होंने महायान की नींव डाली थी। वे धातुओं के परमज्ञाता थे। कुछ लोगो के अनुसार वह महात्मा ६०० वर्षों तक जीवित रहा।[12]

भोटदेशीय ग्रन्थों के आधार पर पं० श्री हरिनाथ शास्त्री ने एक अन्य नागार्जुन के आविर्भाव के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। इस नागार्जुन का काल आठवीं शताब्दी माना जाता है। इनका जन्म विदर्भ देश के कांची नगर में एक सम्पन्न ब्राह्मण के घर में हुआ था। असमय मृत्यु के भय से नागार्जुन के पिता ने अनुचरों की देख–रेख में जंगल भेज दिया जहाँ वे शोकपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे। लेकिन बोधिसत्त्व अवलोकितेश्वर की कृपा से नालन्दा मठ में रहने की अनुमति मिली। नालन्दा मठ के मुख्य आचार्य सरभ थे जिनकी देख–रेख में नागार्जुन शिक्षा प्राप्त करने लगे। ऐसी किंवदन्ती है कि नालन्दा के आस–पास भीषण अकाल पड़ा जिससे सभी लोग संतृप्त

ISSN: 2456-0510
DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407

होने लगे। आचार्य सरभ को मठ के लोगों के भरण–पोषण की बड़ी चिन्ता होने लगी। आचार्य सरभ को यह बात ज्ञात हुई कि समुद्र पार किसी द्वीप में कोई महात्मा स्वर्ण बनाना जानते हैं। आचार्य सरभ ने नागार्जुन को सोना बनाना सीखने को भेजा। नागार्जुन उस महात्मा से स्वर्ण बनाने का रसायन ज्ञात किया और नालन्दा लौट आये। तब लोगों ने उनसे पूछा कि आपकी यात्रा कैसी रही ? आप उत्तर भारतीयों के लिये क्या–क्या लायें हैं ? इस पर नागार्जुन ने उद्घोषणा की कि इस भू–खण्ड से दरिद्रता को मिटाने के लिये मैं पारद को सिद्ध करूंगा।[13] नालन्दा में उन्होने प्रचुर मात्रा में पारद द्वारा स्वर्ण निर्माण कर भयानक दुर्भिक्ष को समाप्त किया।

श्री जयचन्द्र विद्यालंकार ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि नागार्जुन अश्वघोष की प्रशिष्य था तथा अश्वघोष कनिष्क की राजसभा का पण्डित था। नागार्जुन दर्शन के साथ–साथ विज्ञान का भी पण्डित था। उसने एक लौह शास्त्र लिखा और पारे के योग बनाने की विधि निकालकर रसायन के ज्ञान को आगे बढ़ाया। उसने सुश्रुत के ग्रन्थ का सम्पादन भी किया । सातवीं शताब्दी में ह्वेनसांग नामक चीनी यात्री अपनी भारत यात्रा वृतान्त में अपने से सातवीं या आठवी शताब्दी पूर्व के शान्तिदेव, अश्वघोष आदि बौद्ध विद्वानों की भाति बौद्ध विद्वान बोधिसत्व नागार्जुन का भी उल्लेख करता है जो रसायन के द्वारा पत्थर को भी स्वर्ण बना देता था। यह सातवाहन का मित्र था। इसी प्रकार राजतरंगिणी में बुद्ध के १५० वर्ष पीछे नागार्जुन के होने का उल्लेख है।

आचार्य नागार्जुन बौद्ध थे। उन्हें रस विद्या, रसायन विद्या, मायूरी विद्या, वज्रयान, निःस्वभाववाद (शून्यवाद) महाप्रज्ञापारमिता, शास्त्र आदि का विशेष ज्ञान था। ये लगभग १०६ वर्ष की आयु तक जीवित रहे। कुछ विद्वानों की मान्यता के अनुसार वे ६०० वर्ष की आयु तक जीवित रहे।

वास्तविकता यह है कि रससिद्धों का उल्लेख आठवीं शताब्दी में ही मिलता इसी शताब्दी के सिद्ध सरहपा के एक शिष्य नागार्जुन थे। नाथ सम्प्रदाय के मत्स्येन्द्र नाथ एवं गोरखनाथ का भी यही समय था। रससिद्ध नागार्जुन भी इसी शताब्दी के थे। बौद्ध दार्शनिक एवं शून्यवाद के प्रवर्तक नागार्जुन पहली अथवा दूसरी शताब्दी के हैं। संभव है कि वे भी हैमवती विद्या अर्थात् स्वर्ण बनाना जानते हों, परन्तु चमत्कार या किमियागिरि चिकित्सा में पारा और धातुओं का उपयोग आठवीं शताब्दी में ही प्रारम्भ हुआ। जब से इसे सिद्धों का आश्रय मिला तब से सिद्ध इस विद्या को लोगों को चमत्कार, अलौकिक सिद्धियाँ दिखाने के प्रयोग में लाते थे। इससे जनता इनकी ओर आकर्षित होती थी। सिद्धियों के प्रदर्शन के कारण ये सिद्ध कहे जाते थे। इस प्रकार जन सामान्य में रस शास्त्र या रसायन शास्त्र के प्रवर्तक यही सिद्ध हैं। इनमें नागार्जुन भी थे। चूंकि इसी नाम के एक नागार्जुन प्रथम–द्वितीय शताब्दी में हुए थे। उनके पास भी स्वर्ण बनाने की विधा थी, इसलिये रस सिद्धि और पारद सिद्धि को इनके साथ जोड़ दिया गया। ये दोनों अलग–अलग नागार्जुन हैं।

नागार्जुन रचित रस शास्त्र का सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'रस रत्नाकर' या 'रसेन्द्र मंगल' हैं। श्री प्रफुल्ल चन्द्र राय की संगृहीत हस्तलिखित प्रति के अन्त में नागार्जुन विरचित "रस रत्नाकर" शब्द है जबकि स्व० तनसुखराम त्रिपाठी के पास हस्तलिखित प्रति के अन्त में नागार्जुन विरचित "रसेन्द्रमंगल" में यह नाम है। लेकिन 'रसरत्नाकर' का जितना भाग प्रफुल्ल चन्द्र राय ने प्रकाशित किया है उसे रसेन्द्र मंगल के साथ मिलाने पर ज्ञात होता है कि दोनों ग्रन्थ एक ही हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में आठ अध्याय होने का उल्लेख प्राप्त है किन्तु प्राप्त पुस्तक में चार ही अध्याय है। यह ग्रन्थ खण्डित एवं अव्यवस्थित है। उपलब्ध अंश में पारद के अट्ठारह संस्कार, हल्की धातु से सोना बनाने की कीमियागरी, लोहवेध, रस, उपरस और लोह का शोधन, सब लोहों का मारण, अभ्रक, माक्षिक आदि का सत्वपातन तथा अभ्रक दुति का उल्लेख मिलता है। इसमें मन्थानभैरव तथा रोगनाशक दशमूल क्वाथ आदि का उल्लेख मिलता है। तंत्र ग्रन्थों में रस रत्नाकर मुख्य है जिसमें रसायन योगों का समावेश है। यह ग्रन्थ महायान सम्प्रदाय से सम्बन्धित है। रस रत्नाकर में रासायनिक विधियों का वर्णन नागार्जुन, मांडव्य, वटयाक्षिणी, शालिवाहन तथा रत्न घोष के सम्वाद के रूप में किया गया है। नागार्जुन के रस रत्नाकर में कुछ अन्य रसायनों का उल्लेख है।[14]

1. **राजावर्त्त शोधन (Lapis Lazuli):** राजावर्त्त को हिन्दी में लाजवर्त कहते हैं। इसका रासायनिक सूत्र $Na_4(S_3Al)Al_2(SiO_4)_3$ है। रसरत्नाकर में उल्लिखित है कि शिरीष पुष्प रस से शोधित राजावर्त को एक गुज्जा भार (वजन) के रजत (चांदी) को सौगुज्जा भार के स्वर्ण में परिवर्तित करने में सिद्ध होता है।[15]
2. **गंधक शोधन (Sulphur):** इसे हिन्दी में भी गन्धक कहते हैं। इसका संकेत S है। नागार्जुन के रस रत्नाकर में उल्लिखित है कि पीला गन्धक के निर्यास रस से शोधित होने पर तीन बार गोबर के उपलों पर गरम करने पर चाँदी को सोने में परिवर्तित कर देता है।[16]
3. **दरद शोधन[17] (Cinnabar):** इसे संस्कृत में हिंगुल कहा जाता है और हिन्दी में सिंग रफ कहा जाता है। इसका रासायनिक सूत्र Hgs है। नागार्जुन के रसरत्नाकर में इसे दरद कहा गया है। रस रत्नाकर में उल्लिखित है कि दरद में भेड़ के दूध की एक, तत्पश्चात् नींबू के रस की सात भावना देकर अच्छी प्रकार से सुखा लेने से दरद शुद्ध हो जाता है।

इसी में रसक (Calamine) से यशद (जस्त) धातु बनाना, दरद से पारा निकालना भी लिखा है। पारे से एमल्गम (सरस) बनाने की विधि नागार्जुन के नाम से ही है। यथा– पारे को नीबू के रस, नवसार, अम्ल, क्षार, पंचलवण, त्रिकूट, शिग्रु के रस और सूरण के साथ मर्दन करने पर धातुओं का बन्ध प्राप्त होता है।[18]

पारद और स्वर्ण के योग से दिव्य देह प्राप्त करने की विधि रस रत्नाकर में दी गयी है। इसके अतिरिक्त इसमें धातुओं का मारण अन्य धातुओं की सहायता से बताया गया है। अतः हम यह कह सकते हैं कि प्राचीन ऋषि रस और रसायन शास्त्र के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति कर चुके थे एवं इससे अनेक समस्याओं का समाधान भी कर लिये थे। साथ ही उन रसायनों का उपयोग विविध प्रकार से करते थे यथा धातु निर्माण, औषधि निर्माण आदि। चरक, कौटिल्य, नागार्जुन आदि मनीषी अपने जीवन को जड़ी बूटियों, धातुओं, विषों आदि के अन्वेषण में समर्पित कर दिये थे।

ISSN: 2456-0510
DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407

निष्कर्ष

इस शोध पत्र में लेखक ने प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान विषय को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। लेखक ने चरक, कौटिल्य और नागार्जुन के रासायनिक अध्ययन के सिद्धांतों पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए उनके महत्व को प्रभावी रूप से रेखांकित किया है। यह शोध पत्र सफलतापूर्वक यह प्रदत करता है की प्राचीन भारतीय औषधीय प्रयोजनों के लिए विभिन्न रासायनिक पदार्थों की खोज और उपयोग करने में अग्रणी थे। विभिन्न तत्वों के गुणों और उनकी अंतःक्रियाओं की उनकी गहरी समझ ने वैज्ञानिक ज्ञान की उन्नति की नींव रखी। प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान का ज्ञान सैद्धांतिक अवधारणाओं तक ही सीमित नहीं था बल्कि कृषि, कपड़ा उत्पादन और कलात्मक प्रयासों सहित विभिन्न क्षेत्रों में व्यावहारिक रूप से लागू किया गया था। कुल मिलाकर, प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान का अभ्यास सभ्यता की सांस्कृतिक और वैज्ञानिक विरासत का एक अभिन्न अंग था, जो नवाचार, प्रयोग और ज्ञान की गहरी परंपरा को दर्शाता है जो आधुनिक दुनिया में विद्वानों और चिकित्सकों की पीढ़ियों को प्रेरित करता रहता है। इसके अलावा, प्राचीन भारत में रसायन का अभ्यास विभिन्न दार्शनिक विद्यालयों और आध्यात्मिक परंपराओं, जैसे आयुर्वेद, योग और वेदांत से जुड़ा हुआ था। इन विषयों ने ज्ञान और बुद्धिमत्ता की एक समृद्ध श्रृंखला प्रदान की जिसने हमारा भौतिक और आध्यात्मिक दोनों तरह के कायाकल्प की खोज में मार्गदर्शन किया। प्राचीन भारत की रसायन विज्ञान प्रयोगशालाएँ केवल प्रयोग के स्थान नहीं थे, बल्कि पवित्र स्थान थे जहाँ विज्ञान और आध्यात्मिकता के संलयन के परिणामस्वरूप ब्रह्मांड के अंतर्संबंध में गहन अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई। कुल मिलाकर, प्राचीन भारत में रसायन का अध्ययन एक बहुआयामी और समग्र प्रयास था जिसका उद्देश्य भौतिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों के बीच परस्पर क्रिया को उजागर करना था। यह एक महान खोज थी जिसका उद्देश्य अस्तित्व के रहस्यों को सुलझाना और बाहरी दुनिया और आंतरिक स्व के बीच सामंजस्यपूर्ण संतुलन लाना था।

संदभ्र :

1. चरक संहिता, द्वितीय भाग, रसायनाध्यायः १.७–८, पृ० ५
2. अथर्ववेद, ६.८०.३
3. वही, ७.८६.१
4. चरक संहिता द्वितीय भाग वही, १.७८–८०, पृ० २०
5. वही, पृ० २१
6. मिश्र डा० सिद्धिनन्दन, आयुर्वेदीय रसशास्त्र, पृ० १७
7. झा डा० चन्द्रभूषण, आयुर्वेदीय रसशास्त्र, पृ० २६
8. विद्यालंकार अत्रिदेव, आयुर्वेद का बृहत इतिहास ५० ३८१
9. वही, पृ० १२७
10. अनु० श्री भारतीय योग, कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ ५६०–७७२, गैरोला वाचस्पति, कौटिलिय अर्थशास्त्र, पृ० ६०३–६३४
11. डा. चन्द्रभूषण, आयुर्वेदीक रसशास्त्र, पृ० ११,१२
12. मिश्र डा० सिद्धिनन्दन, आयुर्वेदीक रशसास्त्र, पृ० ७
13. वही, पृ० ८, ६ सिद्धेरसे करिष्यामि निर्दारिद्रयमिंद जगत् ।"
14. अन्निदेव विद्यालंकार, आयुर्वेद का वृहत इतिहास पृ० ४०१–०२, झा डा० चन्द्रभूषण पूर्वोक्त, पृ० ४३– ४४
15. वही, किमत्र चित्रं यदि राजवर्त्तक शिरीषपुष्पाग्ररसेन भावितम् । सितं सुवर्ण तरूणार्क सन्निभं करोति गुंजाशतमेक गुंजया ।।
16. वही, किमत्रं चित्रं यदि पीत गन्धकः पलानिर्यासरसेन शोधितः । आरण्यकैरूत्पलक ैस्तु पाचितः करोति तारं त्रिपुटेन कांचनम् ।।
17. वही, किमत्रं चित्रं दरदः सुभावितः पयेन मेष्या बहुशोऽम्लवर्गैः । सितं सुवर्ण बहुधर्म्मभावितं करोति साक्षाद् वरकुंकुमप्रभम् ।।
18. वही

ISSN: 2456-0510
DOI: https://doi.org/10.24321/2456.0510.202407